आचार्य समन्तभद्र

जीवन-परिचय : आचार्य समन्तभद्र विक्रम सम्वत् की दूसरी शताब्दी के प्रसिद्ध तार्किक विद्वान थे। वे असाधारण प्रतिभा के धनी थे और श्रेष्ठ कवि थे।

जैन वाङ्मय में आचार्य समन्तभद्र प्रथम संस्कृत-कवि और प्रथम स्तुतिकार हैं। ये पूर्ण तेजस्वी विद्वान, प्रभावशाली दार्शनिक, महावादिविजेता और कवि के रूप में स्मरण किये गये हैं। जैन धर्म और जैन सिद्धान्त के मर्मज्ञ विद्वान होने के साथ तर्क, व्याकरण, छन्द, अलंकार, काव्य कोषादि विषयों में पूर्णतया विद्वान थे। अपनी अलौकिक प्रतिभा द्वारा इन्होंने तात्कालिक ज्ञान और विज्ञान के समस्त विषयों को आत्मसात कर लिया था। आप संस्कृत, प्राकृत आदि विभिन्न भाषाओं के पारंगत विद्वान थे।

आप ऐसे युग संस्थापक हैं, जिन्होंने जैन विद्या के क्षेत्र में एक नया कीर्तिमान स्थापित किया है। आपने 'स्याद्वाद-सिद्धान्त' की प्रतिष्ठा की है। श्रवणबेलगोला के अभिलेखों में तो इन्हें जिनशासन के प्रणेता और भद्रमूर्ति कहा गया है।

आचार्य समन्तभद्र का जन्म दक्षिण भारत में द्वितीय शताब्दी में हुआ था। इन्हें चोल राजवंश का राजकुमार माना गया था। इनका जन्म क्षत्रियवंश में हुआ और जन्मस्थान उरगपुर है। इनका जन्म नाम शान्तिवर्मा बताया जाता है। वे जैनधर्म का प्रचार करना चाहते थे, इसीलिए उन्होंने राज्य वैभव के मोह का परित्याग कर गुरु से जैन दीक्षा ले ली और तपस्या द्वारा आत्मशक्ति को बढ़ाया।

मुनि दीक्षा ग्रहण करने के कुछ समय बाद कर्मोदयवश उन्हें भस्मक व्याधि नामक रोग हो गया, जिससे दिगम्बर मुनिपद का निर्वाह करना मुश्किल था, अत: उन्होंने अपने गुरुजी से समाधिमरण की आज्ञा माँगी। परन्तु गुरु बड़े निमित्तज्ञानी थे। वे जानते थे कि इनके द्वारा भविष्य में जैनधर्म का विशेष प्रचार एवं प्रभाव होगा, अत: गुरु ने मुनि समन्तभद्र को आदेश दिया कि तुम मुनि दीक्षा छोड़कर

पहले इस रोग को शान्त करो, रोग शान्त होने पर पुन: प्रायश्चित्त लेकर मुनिदीक्षा धारण करना। गुरु की आज्ञा से मुनि समन्तभद्र मुनिमुद्रा छोड़कर कांची (कांजीवरम्) पहुँचे। वहाँ पर भद्राकृति धारण कर शिवमन्दिर में चढ़ाए हुए भोग को खाने लगे, जिससे थोड़े समय में ही उनकी भस्मक व्याधि शान्त हो गयी। धीरे-धीरे राजा को समन्तभद्र पर शंका होने लगी, तब राजा ने इनको शिवपिण्डी को प्रणाम करने का आदेश दिया। तब समन्तभद्र ने 'स्वयंभूस्तोत्र' की रचना की और आठवें तीर्थंकर की स्तुति करते हुए (चन्द्रप्रभ) भगवान की वंदना की। उसी समय पिण्डी फटकर उसमें से चन्द्रप्रभ भगवान की मूर्ति प्रकट हुई, जिससे राजा और प्रजा में जैनधर्म का प्रभाव अंकित हुआ। बाद में प्रायश्चित्त लेकर पुन: मुनि पद धारण किया और वीर शासन का प्रचार करने के लिए विविध देशों में विहार किया।

स्वामी समन्तभद्र असाधारण गुणों के प्रभाव तथा लोकहित की भावना से धर्मप्रचार के लिए विभिन्न देशों में गये, वहाँ के विद्वान उनकी वाद की घोषणाओं और उनके तत्त्विक भाषणों को चुपचाप सुन लेते थे।

आचार्य समन्तभद्र ने करहाटक पहुँचने से पहले जिन देशों तथा नगरों में विहार किया था, उनमें पाटलिपुत्र, मालवा, सिन्धु, पंजाब, कांचीपुर और विदिशा ये प्रधान देश तथा जनपद थे, जहाँ उन्होंने वाद-भेरी अर्थात् वाद-विवाद में विजय प्राप्त की थी।

आचार्य समन्तभद्र के वचनों की यह खास विशेषता थी कि उनके वचन स्याद्वादन्याय की तुला में नपे-तुले होते थे। समन्तभद्र स्वयं परीक्षा प्रधानी थे, अत: वे दूसरों को भी परीक्षा प्रधानी बनने का उपदेश देते थे। आचार्य विद्यानन्द ने उन्हें परीक्षा नेत्र से सबको देखनेवाला लिखा है। उनकी वाणी का यह प्रभाव था कि कठोर भाषण करनेवाले भी उनके समक्ष मृदुभाषी बन जाते थे।

आचार्य समन्तभद्र वर्धमान स्वामी के तीर्थ की सहस्त्रगुनी वृद्धि करनेवाले हुए हैं, अत: समन्तभद्र को श्रुतकेवलियों के समान कहा गया है।

रचना-परिचय : आचार्य समन्तभद्र ने दर्शन, सिद्धान्त एवं न्याय सम्बन्धी मान्यताओं को स्तुतिकाव्य के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। उनके द्वारा रचित ग्रन्थ निम्नलिखित हैं—

1. **वृहत् स्वयंभूस्तोत्र :** इसका अपर नाम स्वयंभूस्तोत्र अथवा चतुर्विंशति स्तोत्र भी है। इसमें भगवान ऋषभदेव से लेकर भगवान महावीर पर्यन्त चौबीस तीर्थंकरों की क्रमश: स्तुतियाँ हैं। इस स्तोत्र में कवि ने चौबीस तीर्थंकरों के इतिहास को सरलता से प्रस्तुत किया है। यह रचना अपूर्व एवं हृदय को प्रसन्न

करनेवाली है।

2. **स्तुतिविद्या (जिनशतक) :** इस ग्रन्थ का मूल नाम 'स्तुतिविद्या' है। इस ग्रन्थ के 'जिनशतक' और 'जिनशतकालंकार' नाम हैं। इसमें 116 पद्य हैं, जिनमें चित्रकाव्य और बन्धरचना का अपूर्व कौशल समाहित है। प्रस्तुत जिनशतक में चौबीस तीर्थंकरों की चित्रबन्धों में स्तुति की गयी है। आचार्य ने इस ग्रन्थ की रचना का मुख्य उद्देश्य समस्त पापों को जीतना बतलाया है।

3. **देवागमस्तोत्र या आप्तमीमांसा :** इस ग्रन्थ का मूलनाम देवागमस्तोत्र है, इसका दूसरा नाम आप्तमीमांसा भी है। ग्रन्थ में दश परिच्छेद और 114 कारिकाएँ हैं। स्तोत्र के रूप में तर्क और आगम परम्परा की कसौटी पर आप्त-सर्वज्ञदेव (भगवान) की मीमांसा की गयी है। आचार्य समन्तभद्र ने इस स्तोत्र में तर्क की कसौटी पर कसकर युक्ति आगम द्वारा आप्त की विवेचना की है।

4. **युक्त्यनुशासन :** प्रस्तुत ग्रन्थ का नाम युक्त्यनुशासन है। यह 64 पद्यों की एक महत्त्वपूर्ण दार्शनिक कृति है। युक्त्यनुशासन अर्थात् युक्ति, प्रत्यक्ष और आगम के विरुद्ध वस्तु की व्यवस्था करनेवाले शासन का नाम युक्त्यनुशासन है। इस ग्रन्थ में भगवान महावीर के सर्वोदय तीर्थ का महत्त्व प्रतिपादित करने के लिए उनकी स्तुति की गयी है। युक्तिपूर्वक भगवान महावीर के शासन का मण्डन और विरुद्ध मतों का खण्डन किया गया है। भगवान महावीर के तीर्थ को सर्वोदय तीर्थ कहा है, यह समस्त विपत्तियों का अन्त करनेवाला सर्वोदय तीर्थ है।

5. **रत्नकरण्डश्रावकाचार :** जीवन और आचार की व्याख्या करनेवाला, श्रावकाचार सम्बन्धी ग्रन्थों में सबसे पहला, सबसे सरल एवं प्रसिद्ध ग्रन्थ 'रत्नकरण्ड श्रावकाचार' है। इस ग्रन्थ में 150 पद्यों तथा सात अध्यायों में विस्तारपूर्वक सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक् चारित्र का विवेचन बहुत ही सरलता से रोचक कथाओं एवं उदाहरणों द्वारा किया गया है। यह ग्रन्थ धर्मरत्न का छोटा-सा पिटारा है। इसमें श्रावक के अष्टमूलगुणों और सम्यग्दर्शन का बहुत ही सुन्दर वर्णन किया है। इसमें ''मोही मुनि की अपेक्षा निर्मोही श्रावक की श्रेष्ठता'' बतलाई है। बारह व्रतों, सल्लेखना एवं ग्यारह प्रतिमाओं का वर्णन बहुत सुन्दर है।

अनुपलब्ध रचनाएँ : जीवसिद्धि, तत्त्वानुशासन, प्राकृतव्याकरण, प्रमाणपदार्थ, कर्मप्राभृतटीका, गन्धहस्तिमहाभाष्य।